५

आसोज शुक्ल ११, शनिवार, १७-१०-१९६४
श्री तारणस्वामी द्वारा रचित श्रावकाचार
गाथा-१९९, २००, २०८, २०९, २१०, २१५ से २२०, प्रवचन - २२

ये श्रावकाचार तारणस्वामी रचित है। इसमें ५३ क्रिया में सम्यग्दृष्टि को १८ क्रिया होती है, उसका वर्णन किया है। १९९ और २०० श्लोक।

सम्यक्त्वं शुद्ध धर्मस्य, मूलंगुणं उच्यते।
दानं चत्वारि पात्रं च, सार्धं ज्ञानमयं ध्रुवं॥१९९॥
दर्शनज्ञान चारित्रै, विशेषितं गुण पूजयं।
अनस्तमितं शुद्ध भावस्य, फासू जल जिनागमं॥२००॥

क्या कहते हैं? पहले तो शुद्ध आत्मधर्म की श्रद्धा रखनेवाले जीव को अर्थात् सम्यग्दृष्टि जीव को '**सम्यक्त्वं शुद्ध धर्मस्य**'। अपना आत्मा पूर्ण परमात्म शक्ति सम्पन्न और राग, विकल्प और पुण्य-पाप से भिन्न ऐसे आत्मा की अन्तर प्रतीति, अनुभव होना वह प्रथम सम्यग्दर्शन है। '**सम्यक्त्वं शुद्ध धर्मस्य, मूलंगुणं**' वह तो निश्चय की बात कही। पहले भी निश्चय की क्रिया। ध्यानादि की क्रिया थी। समझ में आया? ध्यानादि की क्रिया है, वह निश्चय है अन्दर में। ऐसा निश्चय हो, तब ऐसा व्यवहार होता है। वह बात कहते हैं।

जिसको सम्यग्दर्शन निश्चय नहीं है, उसको तो व्यवहार क्रिया है, वह व्यवहार कहने में आता नहीं। समझ में आया? ऊपर-ऊपर से पाले कि देखो! १८ क्रिया कही है। परन्तु वह १८ क्रिया तो व्यवहार है, विकल्प है। किसको? जिसको निश्चय सम्यग्दर्शन, शुद्ध ज्ञायकमूर्ति जैसा सर्वज्ञ परमात्मा ने आत्मा कहा, ऐसा अनुभव में प्रतीत हुई, उसका

व्यवहार कैसा है, उसकी व्याख्या होती है। समझ में आया? अकेला १८ गुण वह समकित की क्रिया और १८ गुण पालते हैं, इसलिए हमें समकित की क्रिया हो गयी, ऐसा नहीं है। समझ में आया? पण्डितजी!

पहले सम्यग्दर्शन निश्चय अविरत सम्यग्दर्शन में अपना आत्मा पर से भिन्न और पर का कर्ता और पर से मेरे में होता है, ऐसा कुछ नहीं है अन्दर। ऐसी पूर्ण शुद्ध स्वभाव की अन्दर अनुभव में भान होकर श्रद्धा का होना, उसका नाम शुद्ध सम्यग्दर्शन है। '**शुद्ध धर्मस्य**' समकित को जीवों को, ऐसे जीव को '**मूलंगुणं उच्यते**' आठ मूलगुण पालना होता है। समझ में आया? पाँच उदम्बर फल आते हैं न? पाँच उदम्बर फल का त्याग। मदिरा, माँस और मधु का सेवन नहीं। है तो वह विकल्प, शुभराग। परन्तु उस भूमिका में ऐसा भाव आये बिना रहता नहीं। आठ मूलगुण पालने का भाव सम्यग्दृष्टि को होता है। माँस खाये या मधु खाये.. समझ में आया? कि दारू पीये, या पाँच उदुम्बर फल तो अकेले त्रस जीव की राशि है, ऐसी खुराक सम्यग्दृष्टि को होती नहीं। समझ में आया?

'**दानं चत्वारि**' चार प्रकार का दान। आहार, औषध, अभय और ज्ञान। चार प्रकार का दान पात्रों को देते हैं। समझ में आया? जघन्य पात्र सम्यग्दृष्टि, मध्यम पात्र पंचम गुणस्थान, उत्कृष्ठ पात्र छठ्ठा (गुणस्थानवाले) मुनि। ऐसा चार प्रकार का दान-आहार, अभय, औषध आदि '**पात्रं च**' परन्तु वह सम्यग्दृष्टि पात्र है, उसको देता है। थोड़ी सूक्ष्म बात है। समझ में आया? '**सार्धं ज्ञानमयं ध्रुवं**' लिया है। भाई! उसको साथ में विवेक होता है। बहुत सूक्ष्म बात है, देखो! पहले तो '**सम्यक्त्वं शुद्ध धर्मस्य**'। सम्यक् दृष्टि जिसको हुई है, शुद्धता आत्मा का भान में हुआ है, ऐसे सम्यग्दृष्टि को '**मूलंगुणं उच्यते**'। उसको आठ मूलगुण का विकल्प व्यवहार आता है। सम्यग्दर्शन का भान नहीं, अनुभव नहीं और मात्र आठ मूलगुण का विकल्प हो, उसको व्यवहार कहने में आता नहीं। डालचन्दजी! पहले निश्चय लिया है, बाद में व्यवहार लिया है। देखो! वर्तमान में गड़बड़ बहुत चलती है। पहले व्यवहार चाहिए, व्यवहार करते-करते निश्चय होता है।

मुमुक्षु : उल्टा चलते हैं।

पूज्य गुरुदेवश्री : उल्टा चलते हैं? बात सच्ची है।

इसलिए ताणस्वामी ने पहले निश्चय लिया। यहाँ तो अपने बीच में गाथा छोड़ दी है, परन्तु पहले ध्यान का लिया न? अन्दर आत्मा एक सेकेण्ड के असंख्यवें भाग में परिपूर्ण अनन्त गुण का पिण्ड, विकल्प नाम दया, दान के विकल्प से भिन्न, शरीर से भिन्न परिपूर्ण स्वभाव, ऐसा अन्तर में परिपूर्ण परमात्मशक्ति का पिण्ड मैं हूँ, ऐसा अनुभव सम्यग्दर्शन में आना, उसका नाम अनुभव का वेदन सम्यग्दर्शन कहने में आता है। सम्यग्दृष्टि अन्तर्मुख में आनन्द का ध्यान करते हैं। वह निश्चय लिया। वह निश्चय हो, तब ऐसी अठारह क्रिया का व्यवहार सम्यग्दृष्टि को होता है। सम्यग्दर्शन नहीं हो, निश्चय नहीं हो और अकेला अठारह मूलगुण की क्रिया हो तो उसका व्यवहार भी कहने में आता नहीं। समझ में आया? एक न्याय बदले तो पूरा तत्त्व पलट जाता है। अठारह मूलगुण पालते हैं, हम समकिती है, ऐसा नहीं।

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ। निश्चय सम्यग्दर्शन वस्तु का भानपूर्वक। देखो! इसलिए '**सम्यक्त्व शुद्ध धर्मस्य**' पहला शब्द लिया है। १९९। '**मूलंगुणं**' उसका आठ प्रकार का मूलगुण (होता है)। पाँच प्रकार के फल का त्याग, मद्य, माँस और दारू का त्याग। ऐसा विकल्प। विकल्प आता है। परचीज़ अपने में घुस नहीं गयी कि मैं छोड़ दूँ। समझ में आया? ऐसे विकल्प में आठ चीज़ें (नहीं) लेने का भाव निश्चय सम्यग्दृष्टि को ऐसा व्यवहार आता है। समझ में आया? एक शब्द में न्याय बदले तो पूरा तत्त्व पलट जाता है।

'**दानं चत्वारि पात्रं**' निश्चय सम्यग्दृष्टि है, धर्मी है, अपना आत्मा पूर्णानन्द पवित्र (है), सर्वत्र ने जैसा आत्मा कहा; अन्य अज्ञानी ने कहा ऐसा नहीं। वीतराग ने कहा ऐसा अनन्त गुण की राशि ऐसा आत्मा एक परिपूर्ण (है), ऐसा भान हुआ, वह '**दानं चत्वारि पात्रं**' चार प्रकार का दान देता है। वह विकल्प है, शुभराग है। दान है, वह शुभराग है; धर्म नहीं, संवर-निर्जरा नहीं। समझ में आया? '**पात्रं च**' ऐसा शब्द बाद में लिया है। चार प्रकार का दान—आहार, औषध, अभय और ज्ञानदान। ये चार प्रकार का दान दूसरे को दे। आहाहर का (देने का) विकल्प उठता है, परन्तु किसको? पात्र को। पात्र शब्द पड़ा है न? सम्यग्दृष्टि, सामने पात्र हो, चौथा गुणस्थानवाला हो, पंचम गुणस्थानवाला हो, छठ्ठा

गुणस्थानवाला हो, वह जघन्य, मध्यम पात्र है, उसको सम्यग्दृष्टि-निश्चय सम्यग्दृष्टि चार प्रकार का आहार देने का भाव विकल्प, ऐसेा व्यवहार ज्ञानी को होता है। समझ में आया?

'**दानं चत्वारि पात्रं च**' क्यों? कि '**सार्धं ज्ञानमयं ध्रुवं**'। है न? उस दान को '**सार्धं ज्ञानमयं ध्रुवं**'। निश्चय ज्ञानमय भाव से विवेकसहित देता है। भान है। सामने मिथ्यादृष्टि है और बाह्य क्रिया ऐसी करता है, दया, दान आदि, उस क्रियावन्त को ज्ञानी पात्र नहीं मानते। समझ में आया? सेठ! जिम्मेदारी बहुत है।

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : यहाँ तो देता है। हो तो ऐसा होता है, उसकी बात है। निश्चय सम्यग्दर्शन अपने में हुआ, उसको व्यवहार ऐसा होता है कि जो व्यवहार में आठ मूलगुण का पालन का विकल्प है और पात्र को चार प्रकार का आहार देने का विकल्प-शुभभाव होता है, पात्र को आहार देना, वह संवर-निर्जरा की क्रिया नहीं है। समझ में आया? आहार दे सकते हैं, ले सकते हैं—ऐसा नहीं। क्योंकि वह तो परचीज़ जड़ है। जड़ का जाना-आना, वह अपने अधिकार की बात नहीं। परन्तु उस समय सम्यग्दृष्टि को पात्र को देने का भक्ति सहित ऐसा भाव शुभ आता है। उसको निश्चयपूर्वक व्यवहार कहने में आता है। समझ में आया? '**सार्धं ज्ञानमयं**' ज्ञान के विवेक सहित। कौन पात्र है, कौन अपात्र है, कौन कुपात्र है, उसका भी ज्ञानी सम्यग्दृष्टि को विवेक होना चाहिए। विवेक बिना उसका व्यवहारदान भी सच्चा होता नहीं। कहो, प्रेमचन्दजी! समझ में आया? पीछे।

'**दर्शनज्ञान चारित्रं, विशेषितं गुण पूजयं**'। सम्यग्दृष्टि जीव निश्चय सम्यग्दर्शनवान... २०० गाथा है। दर्शन, ज्ञान, चारित्र से विशिष्ट जो कोई पुरुष धर्मात्मा है, अपने से अधिक अथवा दर्शन, ज्ञान, चारित्र में खास विशिष्ट है, ऐसे धर्मात्मा की सम्यग्दृष्टि पूजना करते हैं, सेवा करते हैं। समझ में आया? है शुभराग। परन्तु ऐसा व्यवहार उसको होता है। यदि ऐसा भक्ति आदि का भाव न हो, अभक्ति हो तो दृष्टि सच्ची रहती नहीं। समझ में आया? '**दर्शनज्ञान चारित्रं**' वह सम्यग्दर्शन, चारित्र में विवेकित होता है। ऐसा लिखा है। नहीं तो ऐसा अर्थ है कि '**दर्शनज्ञान चारित्रं, विशेषितं गुण पूजयं**'। जितनी सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र में विशेषता है, ऐसे धर्मात्मा का पूजन करते हैं।

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : गुण सहित है, लो न। गुण सहित हो अथवा ऐसे गुण को पूजनीक मानते हैं। दर्शन, ज्ञान, चारित्र। सम्यक् निश्चय सम्यग्दर्शन, निश्चय सम्यग्ज्ञान, निश्चय चारित्रवन्त हो, ऐसा गुण सहित हो, उसे पूजनीक मानते हैं। उसकी पूजा, भक्ति करते हैं। सम्यग्दृष्टि का शुभराग का व्यवहार ऐसा आये बिना रहता नहीं। सम्यग्दर्शन बिना यदि ऐसा कोई अकेला करे (तो) मात्र पुण्यबन्ध होता है। स्वभाव का भानपूर्वक ऐसा हो तो अपनी दृष्टि जितनी निर्मल है, उतनी तो शुद्धता अन्दर वर्तती है। संवर-निर्जरा होती है। और जितना शुभभाव है, उससे पुण्यबन्ध का आस्रव होता है। समझ में आया? कितने बोल हुये? पन्द्रह हुए।

'**अनस्तमितं**'। रात्रि को आहार नहीं करना। रात्रि के बाद भोजन, आहार आदि नहीं (करना)। समझ में आया? यथाशक्ति उसको रात्रिभोजन का त्याग होता है। '**शुद्ध भावस्य**'। पाठ ऐसा लिया है। समझ में आया? निर्मल भाव से, हठ से नहीं। शुद्धभाव सम्यग्दर्शन, ज्ञान की निर्मलता का भानसहित शुद्धभाव (से देता है)। जहाँ-तहाँ शुद्धभाव.. शुद्धभाव... शुद्धभाव पहले लेते हैं। इसके बिना तेरा व्यवहार विकल्प, वह व्यवहार है नहीं। बहुत कठिन बात। डालचन्दजी ने पहले सुना नहीं हो तो उसको ऐसा लगे कि आहा! ये क्या है? ऐसा तारणस्वामी कहते हैं। समझ में आया? वह तो वीतराग मार्ग ऐसा है, ऐसा ही कहते हैं, घर का कुछ नहीं है। समझ में आया?

जिनागम में सर्वज्ञ परमात्मा सन्तों ने जो बात अनादि से चली आयी है। निश्चय सहित व्यवहार, यह निश्चयसहित व्यवहार सम्यग्दृष्टि का कैसा है, उसका वर्णन है। निश्चय सम्यग्दर्शन नहीं है और अकेले व्यवहार आचार की क्रिया करे तो शुभभाव होता है, पुण्यबन्ध होता है। धर्म-बर्म नहीं। और ऐसा करते, करते, करते कभी सम्यग्दर्शन होता है, ऐसा भी नहीं।

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : करते-करते राग होता है, वह तो राग की क्रिया है।

मुमुक्षु : सम्यग्दर्शन नहीं होता?

पूज्य गुरुदेवश्री : उससे सम्यग्दर्शन नहीं होता, तीन काल-तीन लोक में। वह तो पहले से कहते आये हैं। अन्तर स्वभाव चिदानन्द अकेला भगवान चैतन्यसूर्य पूर्णानन्द समस्वभावी वीतरागभाव अपना, उसका अनुभव में प्रतीत होकर सम्यग्दर्शन होता है। इस क्रियाकाण्ड से सम्यग्दर्शन तीन काल-तीन लोक में होता नहीं। समझ में आया? ओहो..! परन्तु ऐसे सम्यग्दर्शन की भूमिका में जब तक पूर्ण वीतराग नहीं हो, तो उस गुणस्थान में ऐसा १८ क्रिया का शुभभाव आये बिना रहता नहीं। समझ में आया? यह सब समझना पड़ेगा। सेठिया होकर आगे बैठे, समझने की दरकार करे नहीं। फिर समझे बिना क्या लाभ होगा? बराबर है सेठ?

रत्नत्रयधारी महात्माओं की पूजा करना। देखो! सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र। सम्यग्दृष्टि जीव हो, सम्यग्ज्ञानी हो, उसकी सेवा और सम्यक्चारित्रवन्त सम्यग्दर्शन, ज्ञान सहित हो, उसकी भी पूजा (करना)। वह है शुभभाव। है शुभ विकल्प। परन्तु वह भाव सम्यग्दृष्टि निश्चयवन्त को ऐसा भाव व्यवहार से आये बिना रहता नहीं। ऐसा व्यवहार का विवेक बताया है। समझे? मिथ्यादृष्टि का विवेक नहीं करते, ऐसा कहते हैं। उसमें नकार (नास्ति) लो तो। आगे थोड़ा आयेगा। सब गाथा नहीं ली है, थोड़ी-थोड़ी ली है, सार-सार। नहीं तो मिथ्यादृष्टि है, कुपात्र है, जिसकी श्रद्धा सर्वज्ञ वीतराग जिनागम के अनुसार आत्मा के अनुभव की दृष्टि है नहीं और अकेला क्रियाकाण्ड है, वह तो कुपात्र है। समझ में आया? उसकी बात यहाँ है नहीं।

'**फासू जल**' प्रासुक जल। अचेत जल। समझ में आया। छना पानी, इतना लिया न। प्रासुक जल—छना पानी। क्योंकि ... यहाँ चौथे गुणस्थानवाला। प्रासुक जल का अर्थ ही उतना किया है कि छना पानी। समझ में आया? गाला हुआ पानी। प्रासुक क्यों लिया है? कि उसमें त्रस न आवे। गलणा को क्या कहते हैं? कपड़ा। छानने का कपड़ा होता है न? उसमें त्रस जीव आये नहीं। त्रस का अभाव बताने को प्रासुक जल लिया है। नहीं तो पानी तो सचेत है। पानी के एक बिन्दु में असंख्य जीव हैं। चाहे तो सात गलने से गले या कुएँ में से निकला हुआ पानी हो या चाहे तो ऊपर से आया हुआ पानी हो, एक बिन्दु में असंख्य एकेन्द्रिय जीव है। समझ में आया? वह अप्रासुक ही है। उसको जब गर्म करके ले तो प्रासुक हो जाए। गर्म करने की यहाँ बात नहीं है।

यहाँ तो सम्यग्दृष्टि प्रासुक जल (लेते हैं)। त्रस को उसमें न आने दे, छना पानी काम में लेता है, ऐसा उसका १७वाँ बोल कहने में आया है। है तो शुभ विकल्प। पानी छानने आदि की क्रिया अपनी नहीं है। आत्मा कर सकता है, छानने की क्रिया जड़ की आत्मा नहीं कर सकता। समझ में आया? ओहोहो! और जिनागम। समता करना। उसमें थोड़ा शीतलप्रसाद ने अन्दर लिखा है न? समताभाव के लिये जिनागम का मनन करना। ऐसा लिया है। कौंस में अन्दर में ले लिया। समताभाव ४३ क्रिया में से... शान्ति अकषाय... थोड़ा भूमिका अनुसार है, ऐसा रखना अथवा कषाय मन्द रखना और जिनागम का मनन करना। देखो! जिनागम सर्वज्ञ परमात्मा ने कहे आगम, उसका मनन करना। अज्ञानी का कहा हुआ, अपनी कल्पना से बनाया हुआ शास्त्र का मनन नहीं। सम्यग्दृष्टि का कोई शास्त्र हो, उसका मनन होता है। अज्ञानी के शास्त्र का मनन होता नहीं। समझ में आया? चार में से कोई भी ले, लेकिन सच्चा मानकर अकेले जिनागम का मनन करता है। दूसरे को झूठा मानकर वांचन, विचार आदि करे, वह अलग बात है। समझ में आया? लो, १८ क्रिया निश्चय सहित हुई।

यस्य सम्यकत हीनस्य, उग्र तव व्रत संयमं।
सर्व क्रिया अकार्या च, मूल बिना वृक्षं यथा॥२०८॥

क्या कहते हैं? जो सम्यग्दर्शनरहित है। अपना आत्मा क्या चीज़ है, उसका अनुभव अन्तर में प्रतीत का भान है नहीं, उसका कठिन तप करना, उग्र तप। छह-छह महीने का उपवास करे, जंगल में रहे, लकड़ी की भाँति शरीर सूख जाए, बिल्कुल रस ले नहीं। उग्र तप शब्द पड़ा है न? उग्र अर्थात् दूध, शक्कर, गुड़, पकवान नहीं, अकेला पानी और ममरा... ममरा को क्या कहते हैं? चावल का (बनता है)। मुरमुरा चावल का बनता है। ऐसा सादा बोराक ले और चार-चार, छह-छह महीने, आठ-आठ महीने का उपवास करे। उग्र तप करे। व्रत पाले। दया, दान, ब्रह्मचर्य पाले, दया पाले, सत्य बोले और संयम इन्द्रिय का दमन, धारणा हो, इत्यादि व्यवहार आचरण अकार्य-व्यर्थ है। है भैया?

'**सम्यकत हीनस्य**'। जिसे, जिनागम सर्वज्ञ परमात्मा ने कहा, ऐसा आत्मा का प्रतीत, सम्यक् अनुभव नहीं, ऐसे जीव को उग्र तप, उग्र व्रत और उग्र इन्द्रिय दमन.. सब उसके साथ ले लेना। व्रत और इन्द्रिय दमन। इन्द्रिय का इतना दमन करे। '**सर्व क्रिया**

अकार्या'। सर्व क्रिया उसको आत्मा के लाभ के लिये थोड़ी भी (कार्यकारी) नहीं है। '**अकार्या च**'। (अज्ञानी कहते हैं), क्रिया करते-करते होता है। यहाँ तो '**सर्व क्रिया अकार्या**' कहा। सेठी! पण्डित लोग इसके सामने चिल्लाते हैं। हम कहते हैं उसके सामने चिल्लाते हैं। यह नहीं। ऐसी क्रिया करते, करते, करते, करते सम्यग्दर्शन (हो जाएगा)। हिन्दुस्तान में यहाँ की बात सुनने के जिज्ञासु बहुत हो गये हैं कि, यह क्या कहते हैं? पण्डितों में खलबली मच गयी।

कहते हैं, इत्यादि व्रत पालन, संयम अर्थात् इन्द्रिय का दमन इत्यादि सर्व व्यवहार आचरण, पुण्य की क्रिया '**अकार्या**' व्यर्थ है। मोक्षमार्ग में नहीं है। उससे कुछ आत्मा का संवर-निर्जरा का लाभ, (ऐसा है नहीं)। किंचित् लाभ नहीं है। निर्णय करना पड़ेगा, डालचन्दजी! अभी तक बहुत चलाया है। निर्णय करना पड़ेगा कि नहीं?

मुमुक्षु : ...

पूज्य गुरुदेवश्री : मिथ्यादृष्टि से प्रेरणा दूसरे को कैसे मिले? धूल में मिले। कोई मिथ्यादृष्टि है, उसकी परिणति-क्रिया से पर को कैसे (लाभ) मिले? समझ में आया?

यहाँ तो तारणस्वामी कहते हैं, '**मूल बिना वृक्षं यथा**'। मूल नास्ति.. कहते हैं न? क्या कहते हैं? कूतो शाखा। वह कहते हैं, देखो! मूल के बिना वृक्ष नहीं हो सकता। जहाँ सम्यग्दर्शन निर्विकल्प चैतन्य क्या है, अपने आत्मा का स्वरूप भगवान, जिनागम कैसा कहते हैं, ऐसी अन्तर में प्रतीत, अनुभव है नहीं, तो वृक्ष के बिना शाखा होती नहीं। इसी प्रकार सम्यग्दर्शन बिना वह सर्व क्रिया-शाखा सच्ची है नहीं। सब झूठ है। कितना उग्र तप करे, हाँ! ये तो भाषा इतनी (है)। उग्र तप की व्याख्या लम्बी है। एक उग्र तप में अनशन, ऊनोदरी, वृत्तिसंक्षेप, रसपरित्याग, कायक्लेश, प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्त्य, सज्झाय, ध्यान व्युत्सर्ग। बारह प्रकार में उसकी व्याख्या लम्बी है। लेकिन यहाँ अपने तो थोड़ा-थोड़ा कहना है। समझ में आया?

उग्र तप में अनशन छह-छह महीने (करे)। अनशन, ऊनोदरी। एक ग्रास ले। दूसरा एक भी ग्रास नहीं ले। बार-बार महीने सदा करे। वृत्तिसंक्षेप। पानी एक घर से ले, दो घर से लेना, बाद में नहीं लेना, ऐसा लेना। इन्द्रियों का दमन। वृत्ति-वृत्ति संक्षेप करे।

और रसपरित्याग। दूध, दही, शक्कर बिल्कुल खाये नहीं। सब रस छोड़ दे। उसका नाम उग्र तप की व्याख्या है। अनशन, ऊनोदरी, वृत्तिसंक्षेप, रसपरित्याग, कायक्लेश। आसन ऐसा लगा दे, छह महीने तक चलायमान नहीं हो। उसमें क्या हुआ? मात्र राग की मन्दता हो तो पुण्यबन्ध हो जाएगा। धर्म-बर्म किंचित् उसको है नहीं। समझ में आया?

इन्द्रिय का दमन, प्रायश्चित्त।... सब विकल्प, शुभराग है। धर्म-बर्म नहीं। विनय करे। देव-गुरु-शास्त्र का बहुत विनय, बहुत विनय करे। बहुत विनय करे तो शुभराग है। सम्यग्दर्शन बिना सब व्यर्थ है। समझ में आया? विनय, वैयावृत्य। देव-गुरु-शास्त्र की वैयावृत्य करे। राग है, सम्यग्दर्शन बिना तेरी क्रिया सब व्यर्थ है। स्वाध्याय। शास्त्र का स्वाध्याय, शास्त्र का स्वाध्याय। पूरा दिन दस-दस, बारह-बारह घण्टे वांचन (करे)। तेरी स्वाध्याय क्रिया सब व्यर्थ है। उग्र तप में इतना शब्द पड़ा है। ये तो संक्षिप्त शब्द है। लम्बा करे तो पार नहीं आवे। थोड़ा-थोड़ा सार-सार (लेते हैं)। सेठ ने कहा न, थोड़ा उतारना है, आठ व्याख्यान। समझ में आया? विनय, वैयावृत्य, सज्झाय, ध्यान। ध्यान करो। ध्यान किसका? वस्तु का भान बिना तेरा ध्यान वृथा है। कायोत्सर्ग। इतनी उग्र तप की व्याख्या की।

व्रत में भी पंच महाव्रत। बड़ा जोरदार व्रत। और संयम में पाँच इन्द्रिय का दमन। '**सर्व क्रिया अकार्या च, मूल बिना वृक्षं यथा**'। अकार्य, जिसमें अपना कार्य सिद्ध होता नहीं। जैसे वृक्ष का मूल नहीं है तो उसकी शाखा आदि होते नहीं। कहो, बराबर है? २०९। लिखा है, तो लिखा है, उसकी बात चलती है। २०९।

सम्यकतं यस्य मूलस्य, साहा व्रत नंतनंताइ।
अपरे पि गुण होंति, सम्यकते हृदयेस्य॥२०९॥

'**सम्यकते यस्य मूलस्य**'। जिसके सम्यग्दर्शन रूपी जड़ है। मूल अर्थात् जड़। जिसके आत्मा में सम्यग्दर्शनरूपी जड़ है। देखो! उसमें ना कही थी न? मूलं बिना... उसको शाखाएँ, ... नहीं हो सकती हैं। उसको क्रमशः शान्ति की ज्वारी होती है। व्रत का विकल्प भी होता है। यथार्थ तप अन्दर आत्मा में आनन्द की उग्रता होती है।

'**अपरे पि गुण होंति**' और भी बहुत गुण होते हैं। सम्यग्दर्शन है, वहाँ बहुत गुण होते हैं। सम्यग्दर्शन बिना ऐसी क्रिया करे तो भी आत्मा को कुछ कार्यकारी है नहीं। '**सम्यक्त्व**

हृदयेस्य'। देखो! हृदय शब्द का अर्थ अन्तरंग आत्मा में। पूर्णानन्द प्रभु, उसका अनुभव में प्रतीत हुई-सम्यग्दर्शन, उसको अनन्त-अनन्त अनेक गुण प्राप्त होते हैं। सर्व क्रिया वृथा कहा है न सामने? यहाँ अनन्त गुण वृद्धि पाते हैं। सामने-सामने लिया है। सर्व क्रिया अकार्य। यहाँ सर्व गुणों की अनन्त-अनन्त बढ़वारी होती है। ऐसा लिया है। सामने-सामने प्रतिपक्ष लिया है। समझ में आया? क्या प्रतिपक्ष लिया? क्या समझे?

सम्यक् आत्मा का वीतराग सर्वज्ञ जिनागम और परमात्मा त्रिलोकनाथ परमेश्वर ने जो आत्मा कहा, उसकी दृष्टि का भान नहीं, उसके बिना तेरी सर्व क्रिया वृथा है। उसके सामने सम्यग्दर्शन है तो सब अनन्त गुण की बढ़वारी, अनन्त गुण उसके सफल हो जाते हैं। समझ में आया? '**सम्यकते हृदयेस्य**'। २१०।

सम्यकत विना जीव जानै श्रुन्येत्र बहुभेदं।
अन्ये यं व्रतचरणं, मिथ्या तप वाटिका जालं॥२१०॥

वस्तुस्थिति ऐसी है। जिनागम सर्वज्ञ परमात्मा ने ऐसा कहा कि, सम्यग्दर्शन के बिना जीव ग्यारह अंग, नौ पूर्व तक बहुत प्रकार से शास्त्र को जाने। दूसरा ज्ञान तो नहीं, परन्तु शास्त्र ग्यारह अंग और नौ पूर्व पढ़ ले। मूढ़ है, मिथ्यादृष्टि है। समझ में आया?

'**अनेय व्रत चरणं**' अन्य जो कोई बहुत व्रतादि आचरण (करे)। बहुत आचरण करे। सब '**मिथ्या तप वाटिका**'। मिथ्या तप का निवासरूपी जाल है। जाल है, बन्ध होगा, बन्ध में पड़ता है। '**मिथ्या तप वाटिका जालं**'। है? २१० हुई। २१५।

सम्यकते यस्य स्रूयन्ते, श्रुतज्ञानमं विचक्षणं।
ज्ञानेन ज्ञान उत्पाद्यं, लोकालोकस्य पस्यते॥२१५॥

देखो! जिस आत्मा के भीतर सम्यग्दर्शन और विचक्षण श्रुतज्ञान। देखो! विचक्षण श्रुतज्ञान अर्थात् यथार्थ श्रुतज्ञान। उसका अर्थ यथार्थ किया। सच्चा श्रुतज्ञान, भावश्रुतज्ञान। आत्मा के भीतर निश्चय भाव सम्यग्दर्शन और भावश्रुतज्ञान है, '**स्रूयन्ते**' अर्थात् परिणमन कर रहा है। है न? '**स्रूयन्ते**'। अन्तर आत्मा ज्ञान, दर्शन, वस्तु दर्शन और ज्ञान से निश्चय यथार्थ परिणमन कर रहा है, तो कहते हैं कि '**ज्ञानेन ज्ञान उत्पाद्यं**'। भावश्रुतज्ञान के द्वारा ऐसा ज्ञान उत्पन्न होता है कि जिससे लोकालोक दिखलायी पड़ता है। क्या कहते हैं? कि

भावश्रुतज्ञान से केवलज्ञान होता है। कोई विकल्प से या दया, दान या पंच महाव्रत से, अट्ठाईस मूलगुण से केवलज्ञान होता नहीं। समझ में आया?

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : नहीं होगा, उससे भी नहीं। यहाँ ये लिया है। कितने बोल लिये हैं, देखो! '**सम्यक्त्व यस्य सूयन्ते**' जिसकी अन्तर्दृष्टि, भगवान सर्वज्ञ ने कहा, ऐसा आत्मा। अज्ञानी कल्पित लोगों ने कहा, ऐसा नहीं, उसको यथार्थ दृष्टि होती नहीं। भगवान ने कहा ऐसा '**सम्यक्त्व यस्य सूयंते**' अन्तर दर्शन की प्रतीति हुई है और परिणमन हुआ है, समझ में आया?

'**श्रुतज्ञानमं विचक्षणं**'। यथार्थ। विचक्षण अर्थात् ज्ञान की यथार्थता अन्तर में भावश्रुत की प्रगट हुई है। सम्यग्दर्शन सहित। सम्यग्दर्शन बिना भावश्रुतज्ञान होता नहीं। और भावश्रुतज्ञान द्वारा... देखो! तारणस्वामी क्या कहते हैं? '**ज्ञानेन ज्ञान उत्पाद्यं**'। भावश्रुत निर्विकल्प ज्ञान से ही आगे केवलज्ञान प्राप्त करता है। दया, दान, व्रत, बीच में आता है। अट्ठाईस मूलगुण आदि व्रत के विकल्प से कोई केवलज्ञान प्राप्त करता है, ऐसा स्वरूप में है नहीं। समझ में आया? निश्चय श्रुतज्ञान मोक्षमार्ग से केवलज्ञान प्राप्त कर सकता है। व्यवहार बीच में आता है। अठारह क्रिया आदि का विकल्प अथवा मुनि के योग्य अट्ठाईस मूलगुण, श्रावक के योग्य बारह व्रत का विकल्प, वह केवलज्ञान की उत्पत्ति में बिलकुल कारण है नहीं। है उसमें? देखो! क्या है तीसरा पद? देखो!

'**ज्ञानेन ज्ञान उत्पाद्यं**'। है २१५ (गाथा)? क्या '**ज्ञानेन**'? श्रुतज्ञानेनं। भावश्रुतज्ञान। अन्दर आत्मा को स्पर्शकर ज्ञान हुआ, स्वानुभव ज्ञान-स्वसंवेदनज्ञान। अपना अनन्त गुण का पिण्ड प्रभु, उसमें विकल्प नहीं, राग नहीं, कल्पना नहीं। अपना ज्ञान का वेदन होकर भावश्रुतज्ञान जो हुआ, वह भाव निर्विकल्प शुद्ध शान्ति का ज्ञान है। अपना सम्यग्दर्शन सहित। वह '**ज्ञानेन ज्ञान उत्पाद्यं**' इस ज्ञान द्वारा केवलज्ञान की उत्पत्ति होती है। ज्ञान की क्रिया से केवलज्ञान उत्पन्न होता है, ऐसा कहते हैं। बीच में दया, दान का विकल्प आता है, परन्तु उस क्रिया से केवलज्ञान होता है, ऐसा है नहीं। पुण्यबन्ध होता है। कहो, समझ में आया?

'**लोकालोकस्य पस्यते**'। कैसा ज्ञान उत्पन्न होता है भावश्रुतज्ञान द्वारा? कि केवलज्ञान में लोकालोक (देखता है)। साथ में लिया है। दूसरे में लोक और अलोक दो विभाग, ऐसा है नहीं। लोक जिसमें छह द्रव्य रहते हैं, अलोक जिसमें खाली आकाश है। अपार, अपार, अपार, अपार... ऐसा लोकालोक का जाननेवाला केवलज्ञान अन्तर में सम्यग्दर्शनसहित भावश्रुतज्ञान के अनुभव द्वारा क्रम से ज्ञान की क्रिया बढ़ती-बढ़ती, ज्ञान की क्रिया द्वारा केवलज्ञान होता है कि जो केवलज्ञान लोकालोक को जानता है। पूरी जैनदर्शन की शैली है। लोक और अलोक, तीन काल अन्य में है नहीं। समझ में आया? अब, २१६।

सम्यकत यस्य न सार्धते, असाध्य व्रत संजमं।
ते नरा मिथ्या भावेन, जीवतोपि मृताएव॥२१६॥

मुर्दा है। अष्टपाहुड़ में कुन्दकुन्दाचार्य ने लिया है। मृतक कलेवर जैसा है। उसमें लिया है। समझ में आया? क्या कहते हैं? '**सम्यकत यस्य न साध्यते**' जिसमें सम्यग्दर्शन का साधन नहीं हो सकता है। भगवान आत्मा निर्विकल्पस्वभाव की अन्तर श्रद्धा, ऐसा निर्विकल्प सम्यग्दर्शन का साधन जिसको नहीं है, '**न साध्यते**' साधन नहीं हो सकता है, वह '**असाध्य व्रत संयमं**' उसका संयम और व्रत पालना असाध्य है, असाध्य है। उसमें कोई साध्य है नहीं। साध्य न? सम्यग्दर्शन का साध्य का साधन नहीं है, उसमें तेरा व्रत और क्रियाकाण्ड दया, दान, व्रत, भक्ति, पूजा, नामस्मरण, जाप ॐ... ॐ करना, इन्द्रिय-दमन सब असाध्य है। अर्थात् वह सच्चा पल सकता नहीं। सम्यग्दर्शन बिना सच्चा व्रत और संयम हो सकता नहीं। अज्ञानी करता है, वह सच्चा है नहीं। समझ में आया? व्रत और संयम का परिणाम असाध्य है अर्थात् होता ही नहीं।

'**ते नरा मिथ्या भावेन**' मिथ्यात्व की भावनासहित होने से। क्योंकि सम्यक् का भान नहीं है। अपने स्वभाव को देखा नहीं, प्रतीत में आया नहीं, भावश्रुत में वेदा नहीं तो भावना उसकी है नहीं। उसकी भावना तो ये विकल्प करूँ, ऐसा करूँ, ऐसा करूँ, ऐसा करूँ (है)। जो दिखता है, उसकी भावना है। मिथ्यात्व की भावना सहित होने से जीवित होने पर भी मृतक के समान ही है। जिन्दा मुर्दा। चलता मुर्दा है, ऐसा अष्टपाहुड़ में कुन्दकुन्दाचार्य (कहते हैं)। ओहो! जीवनशक्ति अपनी अनन्त... अनन्त गुण का भण्डार

जिसमें अमाप शक्ति पड़ी है। परमात्मा ही आत्मा के पेट में पड़ा है। शक्ति में से परमात्मा होता है। समझ में आया? बहुत जगह आता है। अप्पा परमप्पा आता है न? बहुत जगह आता है। अप्पा-अपना आत्मा ही अन्दर परमात्मस्वरूप से पड़ा है। परम आत्मा अर्थात् परम स्वरूप। उससे ही पर्याय में परमात्मा हो है। बहुत जगह आता है। ख्याल है, सब पढ़ा है। सारे पुस्तक पढ़े हैं। समझ में आया?

'**ते नरा मिथ्या भावेन, जीवतोपि मृताएव**'। वह मुर्दे जैसा है। मरे हुए। दिगम्बर साधु हो, अट्ठाईस मूलगुण पालता हो, हजारों रानी का त्याग हो और जंगल में बसता हो। एक बार भोजन कदाचित् एक-एक महीने के बाद लेता हो। समझ में आया? पद्मासन लगा दिया ऐसा। कहते हैं, अन्तर भान सम्यग्दर्शन की चीज़ क्या और उसका ध्येय क्या, भान नहीं है, साधन है नहीं। '**जीवंतोपि मृताएव**'। जीवित मुर्दा है। कड़क भाषा है। सेठी! जीवित होने पर भी मृतक के समान मर गया है। चैतन्य जीवन तो तेरी दृष्टि में है नहीं। पुण्य-पाप, अल्पज्ञता, दया, दान, व्रत, भक्ति का विकल्प उठता है, विकल्पजाल, उसको सर्वस्व मानते हैं कि हम बहुत करते हैं, बहुत करते हैं, बहुत करते हैं। करते-करते हमारे बहुत वर्ष बीत गये। किसमें? अज्ञान की क्रिया में। समझ में आया? है भैया? पण्डितजी! क्षुल्लकपना कहाँ गया? सम्यग्दर्शन बिना क्षुल्लकपना कैसा? ऐलकपना कैसा? व्रत-फ्रत कैसा? सब मृतक कलेवर जैसा है। कहाँ आया? आहाहा! बहुत कठिन। व्यवहार की रुचिवाले को तो घाव लगे ऐसा है। इसलिए खलबली मच गयी न। ... छूट गया है। भगवान का मार्ग ऐसा है। वही बात है। समझ में आया? देखो! .. उसका जीवन अजीवन है। समझ में आया? मृतक के समान है। अब, २२०। २१८ लो। है न?

सम्यक्त्वयुत नरयम्मि, सम्यक्त्व हीनो न च क्रिया।
सम्यक्त्वं मुक्ति मार्गस्य, हीन सम्यक् निगोदयं॥२१८॥

ओहो! लो, निगोद का आया। सम्यग्दर्शनसहित नरक में रहना अच्छा है। '**सम्यक्त्वयुत नरयम्मि**' है या नहीं? वह तो आता है, योगसार में आता है। योगीन्द्रदेव कहते हैं, समकितदृष्टि नरक में हो तो भी कर्म खिरते हैं। तेरा नरक भी अच्छा है। और मिथ्यादृष्टि का नौवें ग्रैवेयक का होना वह भी व्यर्थ है। समझ में आया? सम्यग्दर्शनसहित नरक में रहना अच्छा है। '**सम्यकत हीनो न च क्रिया**' सम्यग्दर्शन से शून्य है, उसकी कोई

भी क्रिया यथार्थ नहीं है। '**सम्यक्त्वं मुक्ति मार्गस्य**' समकित ही मुक्ति का मार्ग है। लो। मोक्षमार्ग में सम्यग्दर्शन मुख्य है। है न? '**सम्यक्त्वं मुक्ति मार्गस्य**' मुक्ति के मार्ग में सम्यग्दर्शन पहले है। सम्यग्दर्शन बिना तेरा ज्ञान भी झूठा, तेरी चारित्रक्रिया भी झूठी, व्रत पालना झूठा, ब्रह्मचर्य पालना झूठा, सत्य बोलना झूठा, रसत्याग झूठा। सब झूठ ही झूठ है। सेठ!

मुमुक्षु : मूल बिना...

पूज्य गुरुदेवश्री : मूल बिना। वह तो पहले आ गया। मूल बिना शाखा कहाँ से आयी? तेरा ठिकाना नहीं, दर्शनशुद्धि का ठिकाना नहीं। सर्व धर्म समान है, सबमें ऐसा है, सबमें ऐसा है, उसमें भी कुछ है न। उपनिषद में ऐसा कहा है, फलाने में ऐसा कहा है, ढिकने में ऐसा कहा है। सब झूठ। गृहीत मिथ्यात्व। सम्यग्दर्शन तो नहीं, लेकिन मिथ्यात्व की तीव्रता और फिर व्रतादि क्रिया सब निगोद में जानेवाली है। समझ में आया? बहुत कठिन, भाई! समाज में रहना और समाज में ऐसा कहना (कठिन है)।

मुमुक्षु : ...

पूज्य गुरुदेवश्री : निगोद का पेट बड़ा है। एक सेठ थे। एक बाई थी, बाई। बाल ब्रह्मचारी। व्याख्यान अच्छा देती थी। अभी भी है, सेठ चल बसे। उसके गाँव की बाई थी। व्याख्यान देती थी। तत्त्व का विरोध करे, बिलकुल विरोध। तत्त्वदृष्टि... सेठ ने कहा, बहिन! ध्यान रखना बोलने में, हों! नहीं तो निगोद का पेट बड़ा है। ऐसा कहा। समझ में आया? बाई ब्रह्मचारी है, बाल ब्रह्मचारी है। ... शास्त्र की बात करे, झूठी कल्पना। लोगों का रंजन करे। दो-दो, पाँच-पाँच हजार लोग आये। ओहोहो! तत्त्व से विरुद्ध कहे। यहाँ का विरोध करे। धीरे बहिन को कहा, बहिन! सेठ के गाँव की लड़की थी। इसलिए उसे साध्वी नहीं माने। बहिन! पुत्री! ध्यान रखना, हों! तत्त्व का विरोध करने में। नहीं तो निगोद का पेट बड़ा है। निगोद का पेट बड़ा है, वहाँ जाना पड़ेगा। ऐसा कहा। समझ में आया? ...भाई! मालूम है न? काठियावाड़ में यह बात बनी थी। काठियावाड़ में। ... समझ में आया?

कहते हैं कि '**सम्यकृत्वयुत नरयम्मि**'। सम्यग्दृष्टि का नरक का आयु बँध गया हो

और जाना पड़े। पहले, हों! सम्यग्दर्शन होने के बाद नयी आयु का बन्ध नहीं पड़ता। क्या कहा? समझ में आया? स्वानुभव हुआ, भान हुआ बाद में नरक की गति का बन्ध नहीं पड़ता। परन्तु पहले नयी गति का बन्ध पड़ गया हो,... जैसे श्रेणिक राजा। उन्हें क्षायिक समकित हुआ। स्त्री, पुत्र, कुटुम्ब हजारों थे। हो, उसमें क्या? क्षायिक समकित। नरक का आयु (बन्ध) पड़ा है, नरक में गये। कहते हैं कि सम्यक्त्वयुक्त नरक में भी प्रशंसायोग्य है। वहाँ भी क्रम-क्रम से सिद्धि करते जाते हैं। पहली नरक में तीर्थंकर गोत्र बाँधते हैं। चौरासी हजार वर्ष की स्थिति में गये हैं। समझ में आया? चौरासी हजार वर्ष की स्थिति में पहली नरक में गये हैं। आगामी चौबीसी के प्रथम तीर्थंकर होंगे। आगामी जगतगुरु त्रिलोकनाथ सौ इन्द्र के पूजनीक, वहाँ से निकलेंगे। छह महीने पहले इन्द्र उसकी माता के पास आयेंगे। माता! जनेता! आपकी कोख में तीन लोक के नाथ जगतगुरु तीर्थंकर पधारनेवाले हैं। बड़े पुरुष आये, तब साफसफाई करते हैं या नहीं? वैसे छह महीने आयुष्य के बाकी हो, ऊपर से इन्द्र माता के पास आयेंगे। अभी नरक में हैं। चौरासी हजार वर्ष की (स्थिति है)। क्षायिक सम्यग्दर्शन प्रगट किया है। दूसरा कोई व्रत, नियम कुछ किया नहीं था, है नहीं। तीर्थंकर गोत्र शुभराग आया (तो) बँध गया है। ये आगे आयेगा, एक गाथा में है। २२० में है, इसके बाद आयेगा। समझ में आया?

कहते हैं कि सम्यग्दृष्टि श्रेणिक राजा नरक में गये, तो भी क्या है? आहाहा! अपने भान सहित है। और '**सम्यकत हीनो न च क्रिया**'। सम्यग्दर्शन से शून्य है, उसकी कोई भी क्रिया यथार्थ नहीं है। लाख, करोड़, अनन्त क्रिया करे, आत्मा की सम्यक् दृष्टि बिना वह सब क्रिया व्यर्थ है। '**सम्यकत मुक्ति मार्गस्य**' समकित मुक्ति का मार्ग है। मुख्य चीज़ यह है। कर्णधार लिया है न? रत्नकरण्ड श्रावकाचार। कर्णधार है। खेवटिया में मुख्य आदमी बैठता है न? ऐसे मोक्षमार्ग में सम्यक्त्ववन्त कर्णधार है। उसको सब विवेक हो गया अन्दर में। क्या वस्तु, क्या स्थिति, क्या पर्याय, क्या गुण, क्या विपरीत, क्या अविपरीत। वह कर्णधार है। कहते हैं कि सम्यक्त्व मुक्तिमार्ग कर्णधार।

'**हीन सम्यक् निगोदयं**' सम्यग्दर्शन से हीन है। हीन का अर्थ रहित लेना। हीन का अर्थ थोड़ा है और थोड़ा नहीं है, ऐसा नहीं लेना। सम्यग्दर्शन कम-ज्यादा होता ही नहीं। या मिथ्यादर्शन, या सम्यग्दर्शन (होता है)। उसमें मिश्र प्रकृति थोड़ी अन्तर्मुहूर्त हो, उसकी

बात नहीं है। सम्यग्दर्शन ..की बात है। कहते हैं, सम्यग्दर्शनरहित निगोदयं। निगोद में चला जाता है। कोई शुभभाव हो तो एकाध भव स्वर्ग में चले जाए, लेकिन बाद में सम्यग्दर्शन रहित है, अन्तर में भान नहीं है तो वहाँ से निकलकर तिर्यंच होकर निगोद में चला जाएगा। फिर अनन्त काल में मनुष्य होना कठिन है। यह श्रावकाचार में बात करते हैं, सेठ! श्रावकाचार, हों! मुनि तो अभी कहाँ है। बहुत अलौकिक बात है। २१९।

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ, बराबर है। चक्रवर्ती हो और समकित रहित हो तो भी.. उसमें क्या है? ... क्रिया। बराबर है। शब्द अलग किया है। अर्थ में किया है। अर्थ में-सम्यक्त्व शून्य है उसकी कोई भी क्रिया यथार्थ नहीं है। परन्तु सम्यग्दर्शन रहित चक्रवर्ती हो तो भी हीन है। बराबर है। नरक में है, ... सम्यग्दर्शन सहित नरक में जाना अच्छा है, सम्यग्दर्शन रहित चक्रवर्तीपना भी बुरा है। चक्रवर्ती क्या, इन्द्रपद अहमिन्द्र होना बुरा है, लो न। यहाँ तो चक्रवर्ती साधारण लिया है, हाँ! अहमिन्द्र हो नौवीं ग्रैवेयक का, परन्तु सम्यग्दर्शन रहित अहमिन्द्र भी बुरा है। उसमें सब में ऐसा ले लेना। अब,...

सम्यक्त्वं युत पानस्य, ते उत्तम सदा बुद्धै।
हीनो सम्यक्त कुलीनस्य, अकुली अपात्र उच्यते॥२१९॥

सम्यग्दर्शन सहित जो कोई भी पात्र हो, चाहे हीन भी हो, समझ में आया? '**युत पानस्य**' उसको पण्डितों ने सदा उत्तम कहा है। '**उत्तम सदा बुद्धै**' ऐसा शब्द पड़ा है न? ज्ञानियों ने सम्यक्त्व सहित चण्डाल हो, रत्नकरण्ड श्रावकाचार में लिया है,...

मुमुक्षु : पशु, पक्षी हो तो भी..

पूज्य गुरुदेवश्री : ठीक है, पशु, पक्षी है न समकिती। बाहर में असंख्य पड़े हैं। असंख्य समकिती पंचम गुणस्थानवाले, चौथे वाले स्वयंभूरमण समुद्र में पड़े हैं। समकिती। सच्चा सम्यग्दृष्टि निश्चय सम्यग्दृष्टि। स्वयंभूरमण समुद्र में असंख्य पशु पड़े हैं। मृग, सिंह, बाघ, वरु, हजार योजन का मच्छ सम्यग्दृष्टि, भान है अन्तर में।

कहते हैं, सम्यग्दर्शन सहित कोई भी पात्र हो, चाहे हीन भी हो, पशु, पक्षी हो, कुत्ता हो। कुत्ते को समकित होता है कि नहीं? बाघ को होता है, सिंह को होता है। देखो! मारकर

खाता है। ... रावण का हाथी, त्रिलोकमण्डन हाथी है। त्रिलोकमण्डन हाथी है। भरत का पूर्व का मित्र था। भरत, राम, लक्ष्मण दर्शन करने को जाते हैं। भरत को वैराग्य हुआ तो दीक्षा ले ली। उसको वैराग्य हो गया। जातिस्मरणज्ञान हो गया। पूर्व का भान हो गया। पन्द्रह-पन्द्रह दिन का उपवास है। देखो! ये हाथी। सब लोग ... हैं। सम्यग्दृष्टि हाथी है, जातिस्मरण है। त्रिलोकमण्डन हाथी। महा जंगली हाथी था। रावण को हाथ आया था। मधुवन में से। फिर राम ने जब लिया... घर लाये। वैराग्य। सम्यग्दर्शन सहित, हों!

कहते हैं कि सम्यग्दर्शन सहित तो पशु भी भला (है)। ओहो! पक्षी भी भला और सम्यग्दर्शन रहित अहमिन्द्र पद और चक्रवर्ती पद भी भला नहीं है। सम्यग्दृष्टि हो, शक्रेन्द्र इन्द्र होता है, वह तो समकिती होता है। अहमिन्द्र मिथ्यादृष्टि होता है। पहले देवलोक का इन्द्र है न, वह तो समकिती होता है। अहमिन्द्र (नौवें ग्रैवेयक का) ऊपर है, वह मिथ्यादृष्टि भी होता है। समझ में आया?

अपना आत्मा क्या चीज़ है, उसका अनुभव का भान बिना, कहते हैं कि चक्रवर्ती, अहमिन्द्रपद भी ... है। और भानवाला.. ओहो! उत्तम सदा। ज्ञानियों ने परमात्मा ने सर्वज्ञ के ज्ञान में... हैं। पशु, पक्षी समकिती हो, उसकी प्रशंसा भगवान की वाणी में आयी। गणधर के आगम में आया है। और दृष्टि मिथ्या भ्रम है, अज्ञान है, उसका बाह्य का त्यागवाला नौवीं ग्रैवेयक चला गया, हीन है, हीन है। क्रम से निगोद में जाएगा। '**हीनो सम्यक्त्व कुलीनस्य**' उत्तम कुलवाला, परन्तु सम्यग्दर्शन रहित है, कहो, समझे? '**अकुली अपात्र उच्यते**'। नीच कुल, नीच पात्र कहा जाता है। परन्तु नीच कुलवाले को नीच पात्र कहा जाता है। किसको? सम्यग्दर्शन रहित उत्तम कुल में जन्म है, तो भी नीच कुल और नीच पात्र है। समझ में आया? पहले में '**पान**' आया था न? '**सम्यक्त्वं युत पानस्य**'। इसमें '**अकुली अपात्र उच्यते**'। सम्यग्दर्शन सहित कोई भी पात्र हो। ... समझ में आया? सम्यग्दर्शन सहित वह पात्र है और सम्यग्दर्शन रहित अकुली अपात्र है। अपात्र है। कितने व्रत पाले, शरीर जीर्ण हो जाए, तो भी उसको अपात्र कहने में आता है। अब, २२०।

तीर्थ सम्यक्तं सार्धं, तीर्थंकर नाम शुद्धये।
कर्म क्षिपंति त्रिविध वा, मुक्ति पंथ सार्धं ध्रुवं॥२२०॥

जो सम्यग्दर्शन सहित है, '**सार्धं**' है न? '**सार्धं**'। '**सार्धं**' का अर्थ साथ-सहित। जो

आत्मा, अन्तर में सर्वज्ञ परमात्मा ने कहा ऐसा, भगवान आत्मा का साथ जिसको दर्शन है, तीर्थंकर नामकर्म को बाँधकर। देखो! सम्यग्दर्शन से तीर्थंकर (प्रकृति) नहीं बँधती। सम्यग्दर्शन तो अबन्ध परिणाम है। सम्यग्दर्शन से बन्ध होता नहीं। परन्तु सम्यग्दर्शन की भूमिका में ऐसा विकल्प आता है, और तीर्थंकर गोत्र बँध जाता है। मिथ्यादृष्टि को तीर्थंकर गोत्र का बन्ध का भाव होता ही नहीं। क्योंकि सम्यग्दर्शन नहीं है। समझ में आया? जिसकी दृष्टि अन्तर में अनुभव से विपरीत है, उसको तीर्थंकर गोत्र बँधने का विकल्प कभी तीन काल में होता नहीं। पण्डितजी! समझ में आया? सम्यग्दृष्टि को दर्शनविशुद्ध आदि षोडशकारण (भावना) आती है न? षोडशकारण है विकल्प, हाँ! षोडशकारण भावना है तो आस्रव, है तो राग, है तो पुण्य; धर्म नहीं, संवर नहीं, निर्जरा नहीं।

यहाँ कहते हैं कि जो जीव सम्यग्दर्शन सहित है, वही तीर्थंकर नामकर्म को बाँधकर तीर्थंकरपने जन्म लेता है। तीर्थंकपने जन्म होता है। इतना पुण्यबन्ध उसको होता है, ऐसा कहते हैं। सम्यग्दृष्टि को ही ऐसा पुण्य होता है। मिथ्यादृष्टि, जिसकी दृष्टि विपरीत है, उसको ऐसा पुण्य कभी तीन काल में नहीं होता। इतना यहाँ सिद्ध करना है। समझ में आया? आत्मा की शुद्धि लिये होता है और जन्म कैसा है? देखो! '**तीर्थंकर नाम सुद्धये, कर्म क्षिपंति त्रिविध च**'। जन्म ही शुद्धि के लिये है। जहाँ तीर्थंकर हुआ, वह केवलज्ञान लेगा, लेगा और लेगा। उस भव में सम्यग्दर्शन सहित आया, तीर्थंकर प्रकृति बँधी तो बँधने से केवलज्ञान नहीं लेगा, परन्तु वह जन्म ऐसा है कि अपनी शुद्धि बढ़ाकर उस भव में केवलज्ञान लेगा। समझ में आया? तीर्थंकर भाव बँधा उस कारण से नहीं। जिस भाव से तीर्थंकर (प्रकृति) बँधी, वह तो राग था। प्रकृति बँधी, वह तो जड़ है। परन्तु जिसको ऐसा भाव सम्यग्दर्शन सहित आया, वह जन्म लेकर अपना शुद्धि बढ़ायेगा और उस भव में केवलज्ञान पायेगा।

'**मुक्ति पंथ सार्धं ध्रुवं**'। उसे यथार्थ मोक्ष का मार्ग विद्यमान है। और तीन प्रकार का कर्म क्षय करते हैं।... नोकर्म, जड़कर्म, भावकर्म। नोकर्म शरीर रहित हो जाता है, द्रव्यकर्म कर्म रहित हो जाता है, पुण्य-पाप के विकल्प रहित हो जाता है। तीनों कर्म को खिराकर वह उस भव में पूर्ण शुद्धि प्राप्तकर मोक्ष प्राप्त करता है। ऐसा सम्यग्दर्शन का माहात्म्य है। वह माहात्म्य यहाँ कहने में आया है। (**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)